सांस्कृतिक तकनीक सामाजिक

सांतसा

मासिक मुखपत्र

चैत्र २०६६ वि.सं., मार्च २००९ ई.स., वर्ष – १२ अंक – १

प्रकाशक

सांतसा न्यास

प्रसांत भवन, बी ५१२, सड़क ४,
स्मृतिनगर, भिलाईनगर, जि.दुर्ग, छत्तीसगढ़
✆ ०७८८ – २३९२८८४

सम्पादक

ब्र.अरुणकुमार “आर्यवीर”
पुनीत प्लाझा, फ्लैट १, प्लॉट १५,
सेक्टर ३०, सानपाडा, नवी मुम्बई
✆ ९२२०५६९५९१, ९८९२९८९७२३

स्वतन्त्र समाज का संकेत= जूताखोर प्रजानन

रविवार १४ दिसम्बर २००८ अमेरिकी राष्ट्रपति जॉर्ज बुश, इराकी प्रधान मन्त्री नूरी अल मलिकी के साथ प्रेस वार्ता कर रहे थे। सम्बोधन के दौरान एक पत्रकार मुंतजर अल जैदी ने बुश पर एक के बाद एक दो जूते फैंके। बुश ने फुर्ती से दोनों जूतों से खुद को बचाया। बुश ने कहा- “ऐसा होता रहता है, और यह स्वतन्त्र समाज का संकेत है।” इसके पश्चात् एक इक्कीस साल के युवक एलेक्स ट्यू ने एक वेब साईट बनाई जिसमें क्लिक् कर बुश को जूता मारा जा सकता था। इससे स्वतन्त्र समाज का स्वस्थ संकेत जाहिर हुआ और बुश को एक करोड़ बीस लाख जूते पड़े।

वास्तव में प्रजातन्त्र में प्रजानन को हर व्यक्ति ने जूता मारना चाहिए। जितना कुछ आचरण हराम होता है, प्रजानन उसे चाव से खाता है। इसलिए उसे जूताखोर भी होना ही चाहिए।

इस अंक में...

वैदिक प्रबन्धन विधाएं......	०२
उल्लूपन पे सवार ये संसार.	०५
प्रजातन्त्र हत्या क्रान्ति......	०८
तेल लो तेल..............	११
सांतसा मानवाधिकार.......	१३
एक कहानी.................	१६

नक्षत्र, भाग्य, वास्तु, प्रजातन्त्र और स्वयं से घटिया की पूजा सबसे बड़े दुर्भाग्य हैं।

इक्कीसवी सदी की वैदिक प्रबन्धन विधाएं....

"चरण प्रबन्धन"

चरण शब्द में दो आधार शब्द हैं। एक चर और रण। तीसरा शब्द है चरण। चरण का अर्थ होता है कदम जो चलने के काम आते हैं। वे कौमें अभागी हैं जो उन कदमों को चूमती हैं या उन चरणों पर झुकती हैं जो जड़ है। जड़त्व चरण की सबसे घटिया परिभाषा है। जड़ता के साथ न चर, न रण और न चरण युजित है। गति प्ररम्भ से जड़ का कोई सम्बन्ध है और न सम्बन्ध हो सकता है।

चर का अर्थ गति होता है। इसमें 'ण' जोड़ देने का अर्थ होता है प्रकृष्ट गति। गति सम्बन्धित चरण प्रबन्धन के महासूत्र निम्नलिखित हैं।

१) कलियुग :- गति का सर्वाधिक घटिया रूप कलियुग है। सोया मनुष्य सबसे कम गतिशील होता है। वह चरणहीन होता है, पर इस अवस्था में तन में अनजाने करवट बदलने किसी को नींद में चलने के रूप में कुछ गति होती है। इससे कम गति तो मात्र मुर्दे की होती है। मुर्दे से घटिया स्थिति जड़ पत्थरों की है क्योंकि मुर्दे कभी तो चलते थे। जड़ पत्थर न कभी चलते थे न चलते हैं। पत्थरों से घटिया स्थिति उन मनुष्यों की है जो जड़ पत्थर पूजते हैं। इन घटिया लोगों को अपने घटियापन का उम्रभर भान भी नहीं होता है। ये सारे घटिया चरण हैं। जानबूझकर घटिया से घटिया चलते हैं, घटिया हरकतें करते हैं। ये उन कीड़ों, मकौड़ों, मक्खियों, पक्षियों, चूहों से भी घटिया हैं जो पत्थरी मूर्ति के सिर सवार हो उसे गंदला कर देते हैं।

२) द्वापर युग :- यह गति का आरंभ युग है। इसे करवट बदलना कहते हैं। चैतन्य हलचल का नाम करवट बदलना है। यह चर का पूर्व कदम है।

३) त्रेता :- चरण का तीसरा स्तर त्रेता है। उठकर खड़ा हो जाना त्रेता पद है। यह चरणों को चर मुद्रा में लाना है। त्रित स्थिति है यह। गति की तैयारी है त्रेता।

४) सतयुग :- सतयुग सात्विक गति का नाम है। जो चल पड़ता है, वह सतयुग है। यह चर की चतुर्थावस्था है।

५) अबयुग :- यह चर की आज की अवस्था है। इसमें व्यक्ति आज ही आज जीता है। तो योजनामय तरीके से दौड़ता है वह अजयुग है। यह चर की पंचमावस्था है।

चर प्रबन्धन सूत्र है :- चरैवेति- बढ़े चलो, बढ़े चलो। जो परिश्रम से थककर चकनाचूर नहीं होता उसे सफलता नहीं मिलती। जो भाग्य के भरोसे बैठ जाता है उसका भाग्य भी बैठ जाता है। सोनेवाला कलियुग है। करवट बदलनेवाला द्वापर युग है। उठकर खड़ा

होनेवाला त्रेता है। चलनेवाला सतयुग है और दौड़ने वाला अबयुग है। ब्रह्म के चरण सर्वत्र हैं। उसकी गति भी सर्वत्र है। उसका केन्द्र हर जगह है परिधि कहीं नहीं है। वह तब-अब-तब है, सदायी स्थायी है, हम अब असदायी अस्थाई हैं। हमारा अब अगर ब्रह्म से जुड़ जाएगा तो हम 'अज' गतित हो जाऐंगे। 'अज' की गति अव्याहत होती है।

रण कहते है संघर्ष को। युद्व भूमि है यह जीवन।
ये जिन्दगी है दौरे संघर्ष तथा कशमश।
हर हार नई जीत की यहां आधारशिला है।
ये जिंदगी है दौरे संघर्ष तथा उत्कर्ष,
हर जीत यहां नई विजय की आधारशिला है।

चरण का अर्थ है च+रण। रण च अर्थात् रण और - और रण। जो रण से डर गया वह हार गया। कायर हजार मौत मरता है। धन लोभी लाख मौत मरता है। यश लोभी करोड़ मौत मरता है। पुत्र लोभी पुत्तैषणा क्षेत्र अरब मौत मरता है। त्रि एष त्रि-रण में विजय प्राप्त कर त्रि ईश बन जाता है, वह मौत को मौत देता है। चरण गति सार्थक करता है। अजयुग उन दीर्घ कदमों से दौड़ता है कि हर लक्ष्य को ही बौना कर देता है।

वह चर+रण = चरण अर्थात दोनों प्रबन्धनों में दक्ष होता है।

"अंहस-प्रबन्धन"

विश्व में सारी त्रुटियों, सारी बीमारियों, सारी कमजोरियों का कारण प्रज्ञा-अपराध है। प्रज्ञा का घटिया में लिथड़ जाना ही प्रज्ञा-अपराध है। सारी की सारी त्रुटियों और रोगों का मूल कारण पाप है जो सबसे पहले प्रज्ञा-विक्षेप से पैदा होता है। 'अहं' का सुकृत रूप है 'स्व' तथा 'अहं' का विकृत रूप है 'अहंस'। अपराध का अर्थ घटिया से लगाव है। घटिया से जिसका लगाव होता है वह घटिया ही पंसद करता है। इसलिए घटिया काम ही करता है। उसकी घटिया करने की आदत ही बन जाया करती है। इस समस्या का निदान क्या है ? वर्तमान युग में शून्य त्रुटि विधा उपकरण जन्य बना दी गई है। अतः प्रायः इसकी प्राप्ति नहीं होती। अंतरिक्षयान गड़बड़ी से होने वाली मृत्युएं इस तथ्य की गवाह है कि मानव के प्रज्ञा-साध हुए बिना व्यवस्था शून्य त्रुटि नहीं हो सकती है। 'त्रुटिलोक' अन्धकार लोक है जो परमात्मा ने 'आत्म-हना' या 'आत्म त्रुटि' लोगों के लिये बनाया है।

१) देंवों को देव है अग्नि। अग्नि अग्रणी है। अग्नि उर्ध्वगवी है। अग्नि ज्योतिरग्रा है। अग्नि यजन देव है। अग्नि गीला लिपायमान नहीं होता है। हम इन अग्नि गुणों को धारण करें। अहं

को इन गुणों से पूर्ण कर लें। हमारे कार्यों रचनाओं में क्रमशः शून्य त्रुटि उतरती चली जाएगी।

२) जीर्णता-शीर्णता-त्रुटियों का मूल कारण है। जीर्ण मशीनें जीर्ण उत्पादन, शीर्ण मशीनें शीर्ण उत्पादन। जीर्णशीर्ण मशीनें, जीर्ण-शीर्ण उत्पादन। जीर्ण-शीर्ण मशीनें ही नहीं जीर्ण-शीर्ण व्यवस्था तथा जीर्ण-शीर्ण मानव भी उत्पादन को त्रुटि-पूर्ण या चौपट करते हैं। जीर्ण-शीर्ण का दूसरा नाम जर है। जर व्यवस्था का एक और दोष यह होता है कि वह परिवर्तन सह नहीं सकती। उद्योग की जिंदगी परिवर्तन प्रबन्धन है। इसलिए अंहस प्रबन्धन का दूसरा मंत्र है 'अजर'।

३) **रक्ष :-** अनपेक्षित विजातीय से रक्षण शून्य त्रुटि का तीसरा तत्व है।

४) **तपिष्ठै :-** अत्यन्त तप जनक प्रभावों द्वारा व्यवस्था को शून्य त्रुटि किया जाता है। इष्ट लक्ष्यों को पूर्णतः दृढ समर्पण का नाम तपिष्ट होना है। इष्ट लक्ष्यों या अर्हताओं पर सुख-दुःख, गर्मी-सर्दी, मान-अपमान, आदि की परवाह किए बगैर, दृढ़ रहना अंहस के प्रबन्धन का चौथा महत्वपूर्ण तथ्य है। तप के द्वारा प्रज्ञा अपराध का शमन होता है। तप 'प्रज्ञा साध' होने की एक महत्वपूर्ण शर्त है।

५) **यविष्ठ :-** युवाओं से अधिक युवा रहने वाला व्यक्ति यविष्ठ कहलाता है। जो हव्य, कव्य, नव्य, दिव्य का धारक, पालक, वाहक है वह यविष्ठ है। नव्य-नव्य अंहस प्रबन्धन का पांचवा तत्व है।

६) **रीषत :-** ईशन वह शक्ति है जिसके सहारे कोई भी कार्य प्रबन्धन सहज सरल संचालित होता है। ईशन शक्ति के पथ में बाध ा शक्तियों का नाम रीषतः है। इससे सहज सरल कार्य में निरर्थ बाधा पड़ती है। त्रि एषणा ग्रस्त व्यक्ति सहल ईशन के स्थान पर ऐंचातानी करते रहते हैं।

७) **प्रति स्म दह :-** यह अंहस प्रबन्धन का अति महत्वपूर्ण तत्व है। इसके अनुसार हर क्षेत्र के त्रुटि कारक को एक-एक कर के जला देना चाहिये। त्रुटि कारक इकट्ठे दूर करने की संकल्पना ही एक बड़ी त्रुटि है। प्रति स्म दह सिद्धान्त में पच्चीस पछहत्तर सिद्धान्त का उपयोग कर लेना चाहिए।

इस प्रकार अग्नि गुण भाव, अजर, रक्ष, तपिष्ठ, यविष्ठ, रीषतः, प्रति स्म दह ये सात मूल त्रुटि निराकरण कर देते हैं। (सन्दर्भ- सामवेद आग्नेय पर्व ४/२४)

डॉ.त्रिलोकीनाथ क्षत्रिय

पी.एच.डी. (वेद), एम.ए. (आठ विषय), सत्यार्थ शास्त्री, बी.ई., एल.एल.बी., डी.एच.बी. , पी.जी.डी.एच.ई., एम.आय.ई. (१०७५२)

बी.५१२/४/स्मृतिनगर, भिलाईनगर,

जि.दुर्ग, (छ.ग.) ४९००२०

दूर. ०७८८—२३९२८८४

E-mail :

triloki_nathkshatriya@yahoo.com

विशेष : इस पत्रिका में प्रकाशित समग्र लेख डॉ.त्रिलोकीनाथ क्षत्रिय जी के हैं... "आर्यवीर"

व्यंग :

"उल्लूपन सवार ये संसार"

उल्लू सवार को लक्ष्मी कहते हैं। उल्लूपन सवार को लक्ष्मीपति कहते हैं। प्रजातन्त्री लक्ष्मीपति अरब-खरबपति होते हैं। प्रजातन्त्र में तीन तरह के अरबपति-खरबपति आम मिलते हैं। प्रथम श्रेणी के खरबपति फिल्मी, द्वितीय श्रेणी के खेल्ली, तृतीय श्रेणी के प्रजाल्ली होते हैं। प्रथम श्रेणी को अभिनेता-अभिनेत्री या एक्टर-एक्ट्रेस, द्वितीय श्रेणी को किरकेटी-टेनिसी और तृतीय श्रेणी को नेता-नेत्री या प्रजानन-प्रजाननी कहते हैं। प्रजातन्त्री संसदें आजकल इन तीनों की तिकड़ी महाविकटी होती चली जा रही है। तीनों तरह के अरब-खरबपति उल्लूपनों पर सवार रहते हैं। जो जितना अधिक उल्लूपनों पर सवार रहता है वह उतना बड़ा अरबपति या खरबपति होता है।

हम प्रथम फिल्मी श्रेणी के सर्वोच्च स्तर से शुरु करें। ये मोम पुतले संघनीकृत लंदनी अमर हैं। कलकतिया लोगों ने इनकी मूर्ति गढ़ मन्दिर सजा इन्हें भगवान मान लिया है। टाइम्स ऑफ इंडिया के एक उल्लू सर्वेक्षण के आधार पर इनके भविष्य में भारत के महामहिम राष्ट्रपति होने की संभावना है। प्रजातन्त्र में हर गप के सच होने की संभावना होती है। चौधरी चरणसिंह के जमाने का नेहरु जय, इन्दिरा जय, संजय-राजीव जय, उनके बेटे-बेटी जय का उस समय का महामजाक सारे सचों का करके कलेजाचाक आज दिखा रहा है नंगा नाच कि प्रजातन्त्र का कहीं कोई भी नहीं है माईबाप। लोगों का सच औसतः रोगी होता है। उच्चतम श्रेणी अभिनेता को भोग के कारण रोग हुआ। पेट रोग का इलाज दिल अस्पताल से न मिला। अंततः दक्ष प्रशिक्षित पेट डॉक्टरों ने कौशलपूर्वक सफल इलाज किया और श्रेय तिरुपति नौ करोड़ के ब्रेसलेट के साथ ले गया। तिरुपति भगवान के बाप-दादाओं ने कभी ब्रेसलेट शब्द भी न सुना था। हजारों मूर्ख मुहूर्त-तिथि-वार-अंक मान्यताओं से फिल्म-फिल्म गुजरकर बेटे की शादी दहलीज पर ये आ पहुंचे। द्वि प्यार द्वार अटक-भटक वधू के मंगली होने पर प्रथम अस्वीकार बाद ये अंधविश्वास के चरम द्वार पहुंचे। मंगल दोष उपचार हजार कलाकार द्वय परिवार अरबपति तथा उनके खरबपति प्रजानन सांसद पार सब करते महा स्वीकार। आक्ख भारत गवाह-गवाह संसार १. अन्दिरों-मन्दिरों भटकना, २. अत्न-रत्न धारण, ३. उंभ-कुम्भ विवाह, ४. उत्तर भारत पीपल-पेड़ से वधू विवाह, ५. दक्षिण भारत मंदिर गाछ से विवाह, ६. अयोध्या में जड़ मूर्ति से विवाह और संभवतः ७. हनुमान के बांए पैर सरसौं तेल चढ़ाना, ८. हनुमान चालीसा पढ़ना और ६. गणेश मन्त्र पढ़ना। इतना उल्लूपन करना। उल्लूपन के महासागरों में सबका डूब मरना और फिर विश्व प्रसिद्ध विवाह करना। यह तो एक परिवार की अंधी व्यथा-कथा है। यहां तो हर फिल्मी हस्ती छोटी-बड़ी उल्लूपन अन्धविश्वासी मुहूर्तों-नम्बरों सनी

है। नायकों की ड्रेस, नायकों के पिटने के दृष्य, नायक चयन, कहानी के ठूंस तत्व, फिल्म नाम आदि-आदि अन्धविश्वासों की भरमार है। जहां जितना उल्लूपन है वहां उतनी मनी-मनी, उतनी सफलता है।

अब किरकेटी दुनियां की बात करें तो विश्वकप जीती टीम में सर्वश्रेष्ठ होने का पुरस्कार जीता व्यक्ति लाल रुमाल गुलाम था। एक महादादा खिलाड़ी महापैसेबाज धनराज ज्योतिषी बताए नम्बरों को कमीज़ पर विशेषतः डलवाता था। इस विश्वकप की टीम के पिद्दीपन का राज हर खिलाड़ी द्वारा भीतर ज्योतिषी द्वारा बताया जीत नंबर 'नौ' पहनना था। नौ का फेर टीम को ले डूबा। हर पचासी-सौव्वी बनाने पर, चौका-छक्का मारने पर कोई मुंह उठा सूरज देखता है, कोई तावीज़ छूता है, कोई क्रॉस खींचता है, कोई लॉकेट चूमता है, कोई शायद जेब रखा जड़ देवता छूता है। जहां इतने अन्धविश्वास टुकड़े-टुकड़े अपने-अपने उल्लूपन खेलते हों वहां टीम का अलनटप्पू होना अर्थात् कभी भी जीतना कभी भी हारना तय है। और हर चुनौति का मौका आने पर ढह जाना स्वाभाविक है। इतने उल्लूपनों पर लक्ष्मी का तो न्योछावर होना ही था। मेरा छोटा बेटा भी अंशतः किरकेटी है। उसने भी कुछ दिन गले में ताविज़ जड़ मूर्ति धारण की। बुरा हो मेरी बीबी का उसने जबरन उसे उतरवा दिया। उसके अरबपति-खरबपति होने का चांस ही खतम हो गया। दोष किरकेटी खिलाड़ियों का नहीं किरकेटी खेल है जो स्वयं अलनटप्पू है। करेला और नीम चढ़ा- भारतीय क्रिकेट टीम शराब डूबी भी है। दूधो-पूतो फलने की कहावत यहां शराबों-अरबों फलों रूप में सार्थक है। हर जीत हर हार यहां शराब का नंगा नाच नही अपितु नंगा स्नान भी होता है। इन्होने कोच का कहना भी न माना कि शैम्पेन पीने की चीज़ होती है नहाने की नहीं, और पूर्ववत शैम्पेन नहाते-फलते रहे। एक कहावत है- मैच के दो घंटे पहले टीम शराब पी रही थी। किसी ने पूछ लिया- "इस समय शराब ?" राजबाग ने कहा- "बताओ हम जीतेंगे तो क्या करेंगे ?" व्यक्ति बोला- "शराब पी खुशियां मनाएंगे।" राजबाग बोला- "और हार जाएंगे तो क्या करेंगे ?" व्यक्ति बोला- "शराब पी गम गलत करेंगे।" राजबाग ने कहा- "जब हर हाल पीना है तो हम अभी ही क्यों न पीएं ? इसलिए पी रहे हैं।" काश कोई कोच समझ सोच पूर्वक भारतीय क्रिकेट टीम को भाग्यवाद और शराब के चंगुल से बचा पाए तो भारतीय टीम हर विश्वकप जीत जाए।

तृतीय खरबपति वर्ग है प्रजाननी। प्रजा हमेशा औसती होती है। औसती प्रजा आखिर है क्या ? जड़ पूजती, वृक्ष पूजती, गंडे-ताविजी, जय-सन्तोषी व्रती, तिरुपतियाई, साई-भाई, भगोड़ों को पूजती, गायत्री को मूर्खता बना अर्चती, चौथे-सातवें बिन्दु भगवानों को पूजती, अंध रामाई, अंध कृष्णाई, मैय्याई और लमलेट जिसकी बुद्धि जड़ ठेठ। और ऐसी प्रजा का आनन

लगा लेनेवाला प्रजानन भी जड़त्व बुद्धि भरा मुहूर्ती, पूजाई, मंदिराई, मसजिदाई, गिरजाई, सब एक साथ नपुसक धर्माई आदि-आदि सर्व उल्लूपन सवार खरबपति होता है।

यह त्रयी, तीन टिकटी महा विकटी, कहीं भव्य बाराती हो विदेशी मद्य प्याली, अजरारे-कजरारे नाचते-झूमते आवेग जाते मिडियाई प्रोपेगेंडा सवार बेड़ा पार धन अतिरिक्त सर्व बंठाधार होता है। यह त्रयी इसी स्थिति नाम रूप बदल विश्व अर्थ सम्मेलन, विश्व शान्ति सम्मेलन, विश्व उद्योग सम्मेलन, सर्वजन प्रिय कजरारे आदि गाते बहकते-बहकते विश्व प्रतिस्पर्धा में भारत के प्रथम ठहराते लगाता ठहाके अरबपति से आगे जाते नहीं अघाता है। मीडिया भौपूओंवत इनका डंका बजाते इन्हें छापते-आपते और इन्हीं के इर्द-गिर्द बिन बुलाए मेहमान उर्फ मक्खीवत झूमते-झामते इनका राग गा, इनके आधार टुकड़े कमा खूब धन मोटाता है।

बे-लय-ताल, पूर्ण असार, यह उल्लूपन सवार संसार... हंसने की चीज़ है यार ! हंसो.. हंसो... हंसो.... त्रि-बार और बार-बार !!

"चादर उजली कर"

जीवन चादर
उजली ही कर
मन है चाकर
यम से वश कर
सनम्र व सादर
बड़ों का आदर
सर आंख धर
पितर व मातर
ब्रह्म नमन कर
भीतर व बाहर

हमारे प्रकाशन

१.क्रियात्मक नेतृत्व, २.सकारात्मक नेतृत्व, ३.सांतसा एवं पर्यावरण, ४.अयोध्या विजय सूत्र, ५.परिवार, ६.स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती- एक सानिध्य आशीष भरा, ७. सूत्रस्य सूत्रम् (सतयुग संभव है), ८.आप्ता, ६.प्रथमम्, १०.वैदिक जीवन भारती, ११. अगाओ की किताब बेकुबा, १२.अति-आत्म साधना, १३.बीजवृक्ष, १४.भापा के भजन, १५.मृत्यु, १६.हृदय चिकित्सा, १७.नवम्नवम् परिवार प्रबन्धन, १८.अमृता प्रीतम और मेरी कविताएं। १६. परीक्षा में सफलता के सूत्र, २०.गृहणी सफलता के सूत्र, २१. सफल जीवन-साथी सूत्र, २२.अतिसमय प्रबन्धन, २३.त्रैतवाद, २४.संक्षिप्त होम्योपैथी दिग्दर्शिका, २५. घेरों को घेर दो।

"प्रजातन्त्र हत्या क्रान्ति"

"ऐतिहासिक समाजों में जनाकांक्षा के रूप में प्रजातन्त्र का जन्म हुआ।" ऐसा विचारक मानते हैं। ऐतिहासिक समाजों की जनाकांक्षा हमेशा ही विकृत रही। एनेक्सगोरस को, ब्रूनो को जला देने की जनाकांक्षा, सुकरात को ज़हर देने की जनाकांक्षा, स्पिनोजा को समाज बहिष्कृत अर्थात् उससे एक लाठी दूर रह बात करने की जनाकांक्षा, कांट को नवचिन्तन से रोकने की जनाकांक्षा, भद्र हाब्स को अभद्र मानने की जनाकांक्षा, गैलीलियो को जेल में डालने की जनाकांक्षा, दयानन्द को पत्थर मारने एवं उनकी मूर्ति को गधे पर बिठाने की जनाकांक्षा के रूप में विकृत समाज तथा रूढ़ समाज एकजूटता का ही परिणाम था कि श्रेष्ठ को घटिया करने का प्रयास किया गया। तब जनाकांक्षा खुलकर नहीं खेल सकी थी। आज प्रजातन्त्र में जनाकांक्षा खुलकर खेल रही है। सारा घटिया चिन्तन वर्ग प्रजाननी (अ. विधल्ली अर्थात् राजनेता, ब. खेल्ली खिलाड़ी वर्ग, स. फिल्मी) व्यवस्था का सिरमौर हो गया है।।१४।।

आज समाज का हर व्यक्ति प्रत्यक्ष लोकतन्त्र का सहभागीदार कहीं न कहीं है। सहकारी संस्थाएं, सामाजिक संस्थाएं, धार्मिक संस्थाएं, जाति संस्थाएं, व्यावसायिक संस्थाएं प्रत्यक्ष लोकतन्त्र के आधार पर चलती हैं। प्रत्यक्ष लोकतन्त्र ने सभी संस्थाओं की मिट्टी पलीद करके रख दी है। और ये सारी संस्थाएं ऐतिहासिक रूप में क्रमशः पतन स्तर को प्राप्त हुई हैं। संस्था सदस्यों की सक्रियता, स्वस्थ विचार प्रणाली, कार्य प्रणाली, कार्य क्षमता आदि में क्रमशः ह्रास आया है। मैं स्वयं लिटररी क्लब, इस्पात हिन्दी साहित्य संसद, इंजीनियर्स फोरम, इंस्टिट्यूट ऑफ इंजीनियर्स, आर्य समाज, भिलाई मेनेजमेंट एसोसिएशन, को ऑपरेटिव सोसाइटी राजहरा, को ऑपरेटिव कैंटीन (निर्माण) का सदस्य रहा हूं। इन सब में प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र रहा है। ये सभी समय के साथ प्रजातन्त्र के बीज कारण दोषों से स्वयं को क्रमशः घटिया करती चली गईं हैं। इनमें एक भी संस्था पूर्व से श्रेष्ठ नहीं हुई है। इनके चुनाव चूँ-चूँ का मुरब्बा होते हैं। प्रायः धूर्त तथा घटिया सिद्धान्त समूह, पंच पक्षी समूह समान पदों पर कब्जा कर लेते हैं। और तो और विश्व में सर्वश्रेष्ठ मात्र प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र चुनाव सिद्धान्त के कारण घोर सैद्धान्तिक, व्यवस्थागत, सामाजिक पतन भोग रही है। इन सबमें अगर प्रजतन्त्र व्यवस्था लागू कर दी जाए तो इनका पतन ठहर जाएगा और ये सब उन्नति करने लगेंगी।।१५।।

"सभी राजनैतिक अधिकारों का स्रोत सामान्य जनता ही है।" प्रजातन्त्र का यह सत्य सरासर गलत है। जनता नामक 'एकक' का 'संविधान' से दूर का भी रिश्ता नहीं होता। जनता में से नब्बे से भी कहीं ज्यादा प्रतिशत लोग संविधान ठीक से जानते भी नहीं। सभी राजनैतिक अधिकारों का स्रोत संविधान है। भारतीय संविधान का स्रोत विदेशी संविधान है। हो सकता है

वे वहां की सामान्य जनता ने या उनके प्रतिनिधियों न बनाए हों। यदि बहुमत जीते प्रतिनिधियों ने संविधान बनाया है तो भी जनता से उसका वास्ता मात्र पन्द्रह-बीस प्रतिशत का है। भारतीय जनता से तो उसका वास्ता बड़ा ही दूर का है। अतः सामान्य जनता सभी राजनैतिक अधिकारों का स्रोत है, असघन प्रत्यय है।। १६।।

ढोल की पोल है प्रजातन्त्र। चुनावी ढोल और पांच साल पोल। इस कारण से सामान्य जन के लिए कालान्तर में प्रजातन्त्र का कोई अर्थ ही नहीं रह जाता है। कुछ राजनेता पांच वर्ष में एक बार चुनाव ढोल बजा लेते हैं। और कोई जीत जाता है, कोई हार जाता है। लोग अपने कामों में लग जाते हैं।। १७।।

माना जाता है कि प्रजातन्त्र विश्व में सार्वभौम समाज या विश्व समाज की स्थापना का आधार सिद्धान्त है। यह मूर्खतापूर्ण मान्यता है। क्योंकि प्रजातन्त्र सिद्धान्ततः गांव-गांव, शहर-शहर, प्रान्त-प्रान्त, राष्ट्र-राष्ट्र तथा संस्थान-संस्थान को मूल स्तर पर टुकड़ों और समूहों में बांटने के मूल सिद्धान्तों को लेकर चलता है। "वसुधा ही कुटुंब" जैसी उदात्त एकीकरण भावना उसके लिए असंभव है। फलहीन बबूल कांटे बोकर मीठे पौष्टिक पपीते या खरबूजे की कल्पना मूर्ख करते हैं। खरबूजेवत परिपक्व सुगन्धि-पुष्टि से भरे संगच्छध्वम्-संवदध्वम् संगठित एक समूह संकल्पना के प्रजतन्त्र में ही वसुधैव कुटुम्ब संकल्पना यथार्थ हो सकती है।। १८।।

प्रजातन्त्र 'विश्व-संसद' की कल्पना करता है। यह अच्छी बात है। मानवाधिकार आयोग तथा अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालयों से इसकी शुरुआत हो सकती है ऐसा उसका मानना है। अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय का गठन अनुभव, योग्यता के क्रम पर है, अतः प्रजतन्त्र आधारित है। मानवाधिकार आयोग चूँ-चूँ का मुरब्बा है। उसके मूल सिद्धान्त 'यम' से भी छोटे हैं। यम पांच हैं- अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह। प्रजातन्त्र के सिद्धान्त अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह से हटकर हैं। दो तीन चार पांच संगठन तू-तू, मैं-मैं.... हिंसाजनक हैं। चुनाव प्रचार वाक् स्वतन्त्रता सत्य हनन है। राजनैतिक पद लाभों की भरमार स्तेय है। पुरुष-पुरुष, नारी-नारी, नारी-मछली आदि विवाह नारी असम्मान अब्रह्मचर्य है। पदों हेतु चुनाव ही परिग्रहाधार है। अतः 'विश्व-संसद' की प्रजातन्त्र की कल्पना का आधार ही थोथा है, बड़ी ही बचपनी है।। १९।।

पर्यावरण व्यक्तिगत जिम्मेवारी है। "अपने द्वारा की गन्दगी स्वयं साफ करूँ" यह पर्यावरण शुद्धि का आधार सिद्धान्त है। इसी प्रकार "प्राकृतिक संसाधन नष्टीकरण", "जनसंख्या वृद्धि", "स्वास्थ्य समस्याएं" भी व्यक्तिगत स्तर से प्रारम्भ होती हैं। व्यक्ति की इनके प्रति जागरूकता शिक्षा के एकीकृत सूत्र रूप में होने से ही बढ़ सकती है। पूरी अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएं मिलकर पर्यावरण तथा स्वस्थ जीवन की "शान्ति मन्त्र" तथा "जीवेम शरदः शतात्"

जैसी परिभाषाएं नहीं गढ़ सकी हैं। और तो और एक भी प्रजातन्त्री सरकार (भारतीय) इन पर सही सन्दर्भ में सोच भी नहीं सकी है। ये शाश्वत श्रेष्ठ संकल्पनाएं प्रजातन्त्र की नहीं अनुशासनबद्ध व्यक्तिगत तथा पारिवारिक, सामाजिक स्तरीकृत जीवन की उपज है। इसी आधारित प्रजतन्त्र द्वारा ही इनका सही समाधान सम्भव है।। २०।।

राष्ट्रीय स्तर पर बुरी तरह विफल अर्थव्यवस्थाओं, ज्ञान व्यवस्थाओं, का मूल कारण प्रजातन्त्री बचकाने प्रावधान हैं। इन्हीं बचकाने प्रावधानों के आधार पर कल्पित अन्तर्राष्ट्रीय प्रावधान इनसे भी बचकाने हैं। राष्ट्र तबाह व्यवस्थाएं क्या विश्व तबाह नहीं होंगी ?।। २१।।

विश्व प्रजातन्त्र स्वयं तीव टुकड़ों में बटा हुआ है। एक विकसित प्रजातन्त्र, दो अविकसित प्रजातन्त्र, तीन प्रजातन्त्र की ठेकेदार अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएं। यह विभाजन न केवल कृत्रिम वरन महाथोथा भी है। आर्थिक सम्पन्नता या विपन्नता के भेदों जिनका मूल कारण पूर्व में की गई लूट-खसोट तथा विषम युद्ध प्रभाव हैं। अतः सारे प्रजातन्त्र एक ही थैले के चट्टे-बट्टे हैं। सारी ही प्रजातन्त्रों में लोकतन्त्र की विजयी पार्टी से कही ज्यादा दुगने से भी अधिक प्रतिशत लोग मत ही नहीं देते हैं। सारी जगह चुनाव एक स्टंट फिल्म की तरह होते हैं। खुले झूठों का नंगा नाच चुनावों में होता है। निःस्वार्थी और अति विद्वान चुनाव को दूर से ही नमस्कार करते हैं। इन चुनावों में बिना मानक घटियातम स्तर वाद-विवाद होता है। चुनाव मुद्दा नाम का कोई सिद्धान्त ही नहीं रह जाता है। कोई गरोंबों को गाय, कोई दूरदर्शन, कोई नौकरी, कोई साइकिल, कोई आरक्षण, कोई चावल-गेहूं आदि-आदि मुफ्त बांटने को मुद्दा बनाते हैं, जो सस्ता लालच होता है। पार्टियां एक दूसरें के आ जाने या चुने जाने का भय दिखाकर। विपक्षी के वोट काटती है। भय लालच आधारित चुनाव घटियातम होते हैं।। २२।।

प्रजातन्त्र में कालान्तर में कुछ इने-गिने प्रजाननों की एक कौम बन जाती है, जिसे नेता कौम या घाग कौम कहते हैं। इसे 'विचार' नाम की चीज जहर लगती है। वैचारिक स्तर पर सही गलत की कोई भी समझ इनमें नहीं होती है। व्यवहारिक धरातल पर इन्हें केवल 'वोट' की समझभर होती है, जो भय-लालच आधारित होती है। यह कौम पूर्व प्रावधानों को निहित स्वार्थों के कारण बेदर्द तरीके से घटिया करती है। इस प्रजानन कौम के शिकंजे में राष्ट्रमाता का यह कौम अपने-अपने घिनौने अनपढ़ ठेठ तरीके से बलात्कार करती है। इस शिकंजे से राष्ट्रमाता को छुड़ाने का प्रयास प्रजातन्त्री संविधानों के दिए रक्षणों के कारण असम्भव हो जाते हैं।। २३।।

प्रजातन्त्र हत्या क्रान्ति से यदि सहमत हैं तो समर्थन करें हर कहीं हर तरह, यदि असहमत हैं तो इसका विरोध करें हर कही हर तरह.... "आर्यवीर"

व्यंग :

तेल लो तेल

दो दोस्त थे। दांत काटी रोटी दोस्त। एक थाली रोटी खाएं दोस्त। हम नाम दोस्त। एक का नाम था श्याम, दूसरे का नाम था मोहन। सम शिक्षा दोस्त। शिक्षा पूरी होने पर श्याम मुम्बई चला गया। मोहन इलाहाबाद में रह गया। दोनों को बिछड़ जाने का गहरा गम था। वर्षों बीत गए। दोस्ती की याद धुंधली हो गई।

मोहन ने तेल बेचने का काम शुरु किया। एक तेली के यहां से तेल लेता, शीशियों में भरता, शहर की गलियों में घूम-घूम कर बेचता। पहले साईकिल पर घूमते-घूमते "तेल लो तेल" चिल्ला-चिल्ला कर बेचता रहा। फिर एक ठेला सजा कर उसमें लगी घंटी बजाकर बेचता। वह तेल बेचने में दक्ष हो गया। दिन भर काम करता। थका हारा श्याम को खाना खा सो जाता। उसकी गृहस्थी की गाड़ी उसी के ठेले के समान चूं चमर चूं चमर चल रही थी।

एक दिन उसका बेटा टीटू उसके दोस्त के घर गया। वहां टीव्ही चल रहा था। उस पर एक विज्ञापन आ रहा था। ठंड़ा-ठंड़ा, शीतल-शीतल, कूल-कूल तेल लो तेल। चिकना-चुपड़ा, सजा-सजाया, चमचमाया-जगमगाया, चेहरा और सूटेड़-बूटेड़ अप-टू-डेट हीरो तेल बेच रहा था। टीटू ने वह देखा तो सोच में पड़ गया। उसके पापा भी तेल बेचने का काम करते हैं और यह आदमी भी। छोटा दिमाग उसकी सोच गडबडा गई।

टीटू ने एक दिन अपने पिता से कहा- पापा तुम टीव्ही वाले साहाब जैसा तेल क्यों नहीं बेचते ? मोहन कुछ समझा नहीं आखिर एक दिन अपने पापा को वह खीच कर ले गया और वह विज्ञापन दिखा दिया। मोहन चौंक गया अरे यह तो श्यामू है। सन्तोष और आश्चर्य एक साथ हुआ। सन्तोष इस बात का कि श्यामू भी तेल बेचता है। और आश्चर्य इसलिए कि उसके इतने ठाट-बाट हैं। उसे बचपन याद आ गया। वह श्यामू से मिलने उतावला हो गया।

कई पापड बेल वह मुम्बई पहुंचा। कूल तेल कंपनी पहुंचा। उसके मालिक से मिला, अपने तेल बेचने की दक्षता मालिक को सुनाई। श्यामू से अपनी दोस्ती बताई। मालिक उसे लेकर श्यामू के घर गया। वह भौंचक्क रह गया। फटी आंखो से देखता रहा। उसे बाहर बैठा मालिक अन्दर गया। अन्दर श्यामू और मालिक में बातें होने लगीं जो उसने सुनी।

हम नया तेल लांच कर रहे हैं आप क्या लेंगे ? मालिक ने पूछा।

आप मेरा मूल्य जानते हैं श्यामू बोला।

कुछ कम नहीं होगा ?

थोथा चना बाजे घना, आत्महना माने सना है प्रजातन्त्र। सौ दिनों में गरीबी हटानेवाले बोफोर्स कीचड़ से नहा, हिरण्यस्विस बैंक डूब, हवाला डकार, भारतरत्न हो जाते हैं। भरी छतों, भरे पादानों, सीढ़ियों तक अटके-लटके लोगों के साथ झटकों-धचकों में घनघनाती ठसाठस भरी उबड़खाबड़ ☛

मंहगाई बढ़ रही है, मैं भी अपना मूल्य बढ़ाने जा रहा हूं। चलिए आठ करोड़ दूंगा। ठीक है मैं तैयार हूं।

मोहन ने सुना, बुदबुदाते बोला- छिः साला खुद को बेचता है। वह उठकर सरपट चला गया। अन्दर मालिक ने कहा आप का दोस्त मोहन आप से मिलने आया है। बाहर बैठा है।

कौन मोहनू ? श्यामू बाहर दौड़ा, मोहनू जा चुका था।

(पृष्ठ १६ का शेष...एक कहानी) ले तत्काल खुश-खुश चला जाता है। चारों ओर रिश्तों की मिठास फैल जाती है।

“अकमल चश्मा घर” वे सामने पड़ी पहली दुकान घुसते हैं। जहां सारे अपरिचित हों वहां हर एक को परिचित समझना चाहिए। वह कहता है। ठीक रिक्शावाले निजामुद्दीन की तरह, वह कहती है। वे हंसते-हंसते दुकान में प्रवेश करते हैं।

कृपया यह चश्मा ठीक कर देंगे, कमानी बदल देंगे। वह चश्मा उतार दुकानदार को देता है। पूछता है- अकमल का क्या अर्थ होता है। अकमल- दुकानदार कमानी देखते कहता है।

अक याने झिझक, मल याने त्रुटि। जहां त्रुटि करते लोग झिझकते हों। यह एक अर्थ हुआ। और ‘अ’ का अर्थ होता है नहीं ‘क’ का अर्थ भी होता है नहीं। दो नहीं का अर्थ पक्का नहीं है त्रुटि को स्थान यहां। अर्थात् शत प्रतिशत ठीक, मलरहित या त्रुटिरहित काम। वाह भाई वाह ! वह स्वयं ही खुश होता है। सभी खुश होते हैं। दुकानदार खुशी-खुशी काम में भिड़ जाता है। औजार मानों हाथों से तेज चलते हैं।

पहली ही दुकान आया हूं, भाई ठगना नहीं, क्या लोगे ? वह पूछता है।

पचास रुपए। दुकानदार कहता है। वह धीरे से कहता है, जो उचित हो ले लेना, बस ठगना नहीं।

दुकानदार चश्मा ठीक कर देता है। वह उसे पचास का नोट दे लौटने लगता है। दुकानदार लौटते हुओं को दस रुपए लौटा देता है। सच्चा दुकानदार सच्चे ग्राहक को ठगता नहीं। ◈◈◈

☛ सड़कों दौड़ती बसों की लावारिस व्यवस्था में हेमामालिनी की गालों जैसी सड़कों की घोषणा करता आत्महना जन पुनः राज्य का मुख्यमन्त्री ही नहीं केन्द्रिय मन्त्री मानसना भी हो जाता है। हत्या के योग्य है प्रजातन्त्र।

सांतसा मानवाधिकार

आज विश्व में मानवाधिकारों की धूम है। संयुक्त राष्ट्र संघ की संयुक्त उद्देशिका प्रावधान में जिन मानवाधिकारों का विवरण है, वे ही विश्व के प्रजातन्त्र हर प्रजातन्त्र के संविधानों की उद्देशिका में तनिक-तनिक परिवर्तनों के साथ लिए गए हैं। इन संविधानों में खास प्रावधान है कि- विश्व मानव को "विचार, विश्वास, अभिव्यक्ति, धर्म और उपासना की आजादी या छूट", "सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक न्याय" और पन्थ=धर्म निरपेक्षता गणतन्त्र मिले। इन मूल प्रावधानों में ये मानवाधिकार निर्बाध हैं। इनमें कुछ किन्तु-परन्तु प्रावधानों द्वारा रोक लगाने का प्रयास किया गया है। वास्तव में किसी भी प्रावधान की मूल निर्बाधता सामाजिक क्षेत्र में उस प्रावधान को थोथा कर देती है। यह एक तकनीकी तथ्य है। सामाजिक शब्द ही व्यक्ति पर रोक या परतन्त्रता का अर्थ रखता है। और सामाजिक शब्द के साथ स्वतन्त्रता का प्रयोग किया ही नहीं जा सकता है। "सामाजिक स्वतन्त्रता" शब्द ही समाज के हत्यारे हैं।

विश्व के प्रथम सांतसा वैज्ञानिक महर्षि दयानन्द आर्य समाज के दसवें नियम में लिखते हैं- सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें। यह विधान मानवाधिकार समाज और व्यक्ति, स्वतन्त्रता और परतन्त्रता की सही समझ रखता है। "सामाजिक सर्वहितकारी नियम" तथा "प्रत्येक हितकारी नियम" का सम्बन्ध 'सब मनुष्यों' तथा 'प्रत्येक' शब्दों पर विचार करने से स्पष्ट होता है। सामाजिक के साथ 'सर्वहितकारी' तथा प्रत्येक के साथ 'हितकारी' शब्द है। प्रत्येक का अर्थ है 'प्रति एक' या एक मनुष्य। कई प्रति-एक मिलकर समाज का अस्तित्व बनता है। इस सन्दर्भ में सामाजिक सर्वहितकारी तथा हितकारी प्रावधानों की विवेचना आवश्यक है।

इसके लिए हमें योग दर्शन के अष्टांग योग के प्रथम दो अंग "यम-नियम" को देखना होगा। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह ये पांच यम हैं। ये पांचों समाज से जुड़े हैं और व्यक्ति को परतन्त्र करते हैं। ये सामाजिक सर्वहितकारी परतन्त्रकारक नियम हैं। शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर-प्रणिधान ये पांच नियम हैं। ये प्रत्येक व्यक्ति से जुड़े हितकारी नियम हैं। ये व्यक्तिगत हितकारी नियम हैं। इन क्षेत्रों में व्यक्ति निर्बाध स्वतन्त्रता का उपयोग कर सकता है।

इसमें अहिंसा है समस्त काल में, समस्त प्रकार से, सभी के प्रति द्रोह का तथा वैर का त्याग। यह सामाजिक राजनैतिक न्याय है। सत्य कहते हैं- वाक् मन से जैसा पंचेन्द्रियों से देखा, समझा तथा परिपुष्ट हुआ वैसा ही कहना तथा आचरण करना। यह भी सामाजिक राजनैतिक न्याय है। अस्तेय है बिना स्वामी की इजाजत के किसी की अधिकृत वस्तु की इच्छा

भी न करना। पर अधिकृत संसाधनों पर पूर्ण अधिकार का पूर्ण स्वीकार अस्तेय है। यह आर्थिक न्याय है। ब्रह्मचर्य अध्ययन उम्र में उपस्थ इन्द्रिय का पूर्ण संयम एवं उसके बाद अधिकृत पत्नी से भी नियत उद्देश्य एवं तिथि को ही सम्बन्ध रखना। यह सामाजिक नैतिक न्याय है। अपरिग्रह है पुत्रैषणा, वित्तैषणा, यशैषणा, इन्द्रिय विषयों तथा अभिमान आदि का त्याग। यह सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक न्याय का सर्वहितकारी नियम या न्याय है। इन सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक न्याय अनुशासन जो सर्वहितकारी हैं, इनके पालने में व्यक्ति परतन्त्र है।

"सत्य वाक्" विचार, विश्वास, उपासना, अभिव्यक्ति की निर्बाधता पर रोक है। प्रजातन्त्र में मानवाधिकार का पालन प्रावधान विसंगतियों के कारण अति कठिन है। यही कारण है कि यहां अहिंसा ही हिंसा से घायल है। भारत में एक लाख छियासी हजार के करीब लोग प्रतिवर्ष आत्महत्या करते हैं। आत्महना होना सबसे बड़ी हिंसा है। चोरी, लूट, ठगी, भ्रष्टाचार, घूस, डकैती आदि की भरमार हर कहीं है। आर्थिक अन्याय अतिव्यापक है। उपस्थ इन्द्रिय असंयम का सामाजिक अन्याय तो इस सीमा तक बढ़ गया है कि स्त्री-स्त्री विवाह, पुरुष-पुरुष विवाह से आगे स्वेच्छया संगणक गुड़ियाओं को पत्नी बनाना भी कानूनन जायज है। 'सत्य' की कसौटी ही ध्वस्त हो गई है। विचार, विश्वास, अभिव्यक्ति की आजादी ने सत्य का कचूमर निकाल के राजनैतिक, सामाजिक न्याय की मानो हत्या ही कर दी है। अपरिग्रह को तो भाईभतीजावाद, भूमिवाद, कुर्सीवाद खा गया है। संविधान में ही अयोग्यों के लिए सर्वोच्च कुर्सी प्रावधान कर दिया गया है। सर्व अन्याय का महाराज्य सर्वत्र है।

प्रजातन्त्र के सारे मुख्य संस्थापक चिन्तक घटिया जीवन जीनेवाले थे। रूसो, मैकियाविली, हाब्स आदि सभी कुण्ठित मस्तिष्क थे। इनके दिमाग की उपज प्रजातन्त्र भी उतनी ही घटिया व्यवस्था है। हत्या करो इसकी।

भारतीय संस्कृति में सामाजिक सवहितकारी नियमों को हर व्यक्ति के मन, बुद्धि, चित्त, आत्मा में रोपने का उत्कृष्ट प्रावधान है। और शौच = भीतरी-बाहरी पवित्रता, सन्तोष = स्व सीमा पहचान, तप = द्वन्द्व सहनशक्ति विकास, स्वाध्याय = शिक्षा उन्नयन और ईश्वर प्रणिधान = ईश्वर गुण धारण के निर्बाध प्रावधान द्वारा मानव का सशक्तिकरण किया गया है। कि वह त्रय न्यायों पर दृढ़ रह सके।

योग दर्शन के दो शब्दों यम-नियम का प्रावधान तथा सांतसा वैज्ञानिक महर्षि दयानन्द के सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र एवं प्रत्येक हितकारी नियम में स्वतन्त्र प्रावधान दूसरे शब्दों में सांतसा मानवाधिकार के पालन की आज महती आवश्यकता है।

कहानी

यह लखनऊ है। अदब, नफासत, लज्जत का शहर। गोमती के किनारे से सौ मीटर दूर एक घर का दरवाजा खोल वह और वह घर से निकलते हैं। दरवाजा हल्की सी घर्षण आवाज करता है।

दरवाजे का संगीत सुना तुमने? वह पूछता है।

हां वह कहती नहीं पर गर्दन हिलाती है।

दोनों एक दूसरे को देखते हैं। एक मुस्कान मुस्कुरा देते हैं। मोड़ मुड़ते हैं गुलाबी महक उन्हें सरोबार कर देती है। वहां पीपल का पेड़ था। करीब पांच फुट घेरे का पेड़। पतझड़ का मौसम, पियराते पात। तनिक हवा चिल-चिल चिलकते डोलते। हवा का एक झोंका आया। कई पात झरते हैं, उन पर गिरते हैं।

पतझड़ हमें आशीष दे रहा है वह कहती है।

पतझड ! आशीष ! बिल्कुल ठीक। वह लघु कविता कहता है। वह हंसती है। वे पेड़ के पास पहुंचते हैं। वहां एक चबूतरा है। चबूतरे के नीचे कुछ कुम्हलाते शोख लाल गुलाबों की मालाएं पड़ी हैं। गुलाब लाल हों या सफेद या पीले या गुलाबी। इन सबकी महक गुलाबी ही क्यों होती है ? वह कहता है।

क्योंकि रोज़ इज रोज़ इज रोज़। वह किसी अंग्रेज कवि की पंक्तियां कहती है।

हर गुलाब है गुलाब, गुलाब ही है गुलाब कहता वह गुलाब मालाएं उठाता है।

अरे पहन मत लेना, वह चौंकती है। वह उसकी आदत जानती है।

अरे नहीं, देवी इसकी हकदार है।

मैं नहीं.. नहीं... वह पीछे हटती है। देवता के बासी फूल मैं नहीं पहनूंगी। वह वहीं पीपल पेड़ के पास रखी अर्ध भग्न मूर्ति पर मालाएं चढ़ा देता है। बेचारी बाकी मूर्तियां उन्होंने क्या गुनाह किया है ?

वे ज्यादा पूर्ण हैं, ताजे फूलों के हकदार हैं। दोनों हंसते हैं। वहां सौ के करीब छोटी बड़ी, भगवानों, भगवती की मूर्तियां आढ़ी-टेढ़ी, टूटी-अटूटी, असज्जित-अवस्त्रित पड़ी हैं। इन्हें बगुला भगत यहां छोड़ गए हैं और कई कौओं, गौरेयों, मैनाओं, और बगुलों ने इन पर बीट भी कर दी है।

आओ इन्हें ठीक-ठाक कर दें वह कहती है।

ठीक है कह वे भिड़ जाते हैं। भग्न-अभग्न अलग-अलग करते हैं। मुड़े-तुड़े वस्त्र ठीक करते हैं। नग्न होते भगवानों को अनग्न करते हैं। उन्हें पौछते हैं। आढ़े-टेढ़े से सीधा

करते हैं। अलग-अलग कर छोटे-बड़े क्रम में सजाते हैं। आधा घण्टे का समय हंसते-हंसते टीका टिप्पणी करते बीतता है। वे हल्के फुल्के हो वहां से हटते हैं। उनके हटते-हटते चबूतरे पर एक श्वान चढ़ता है। और घूम-फिर कर दो-तीन जगह पैर उठा देता है। एक आदमी उसे भगाता है। वह भागते-भागते तीन-चार मूर्तियों को लतिया देता है। वे गिरती पड़ती हैं। उनके हाथ-पांव टूट जाते हैं। कुछ गाय-भैंस फूलमालाएं खाते मूर्तियां तहस-नहस करते हैं।

जिनके भगवान इतने अपाहिज, टूटते-फूटते, गिरते-पड़ते हैं, उनका खुद का अस्तित्व कितना लुंज-पुंज, कुन्द होगा ! वह बोलता है।

ऐ रिक्शा.. वह रिक्शा रोकती है। उसने तनिक ऊंची सैण्डल पहनी है। वह उसे पीठ पर हाथ से सहारा दे रिक्शा में पहले बिठाता है। और वे अमीनाबाद जा रहे थे।

आपका नाम ? वह पूछता है।

निजामुद्दीन, रिक्शावाला उत्तर देता है।

अपने नाम का अर्थ जानते हो ?

निजाम का अर्थ होता है राजा, रिक्शावाला कहता है।

और निजामुद्दीन है राजाओं का राजा। अरे यार तुम इतने बड़े हो, राजाओं के राजा। वह आंख फैलाता है।

तुम्हारी जगह यह और कौन आ गया ? वह धीरे से उस पर दबाव डाल कहती है।

क्या साहाब मैं तो राजा भी नहीं, निजामुद्दीन का स्वर हताश था।

अपने घर के तो हो। वह भी हो जाओगे। मेरी भविष्यवाणी है। रिक्शे की गति में उत्साह आ जाता है। तीनों खुश हो जाते हैं। उसे चश्मा बनवाना है। रास्ते में केसरबाग गोल चक्कर चश्मा बाजार आता है।

ए.. ए भाई रुको वह कहती है। अरे रुको साले भाई, निजामुद्दीन ! तुम इनके भाई मेरे साले हो गए। वह कहता है।

क्या साहब, निजामुद्दीन रुकते कहता है। वह उतरते-उतरते उसे हाथ पकड़ उतारता है। रिक्शावाले को पैसे देता है।

जीजाजी से पैसे नहीं लूंगा, वह कहता है।

तो दीदी से ले लो, लो भाई तुम दे दो। वह सहजतः पैसे लेकर उसमें पांच अतिरिक्त जोड़ पैसे देती है। रिक्शेवाला निजामुद्दीन हो दस रुपए कम **(शेष पृष्ठ १२ पर देखें)**

सांतसा न्यास के लिए इस त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन सम्पादक ब्र. अरुणकुमार "आर्यवीर" द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित कराया गया। मुद्रक : प्रिंटकॉन, अहमदाबाद ०७९-३२९८३११८